जनगाथाओं और लोकप्रिय कथाओं का विक्रमादित्य की ऐतिहासिकता

डॉ0 संगीता शुक्ला,

एसोसिएट प्रोफेसर,

प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, नवयुग कन्या महाविद्यालय,

लखनऊ विश्वविद्यालय से संबद्ध, लखनऊ

अपने कुल जाति/राज्य के प्रतिष्ठित नायक के साथ परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा स्वयं को सम्बद्ध करने में गौरव महसूस करने तथा उसे सार्वजनिक रूप से अभिव्यक्त करने की परम्परा वर्षों पुरानी एवं सार्वभौमिक है। अपने आदर्श पुरूष का नाम, परिधान एवं सज्जा शैली अपनाकर व्यक्ति उस नायक के प्रति आदर तो व्यक्त करता ही है। ऐसी घोषणा कर समाज को भी उन्ही गुणों को अपनाने की प्रेरणा देता है। जन्मदाता द्वारा अपनी संतति के नामकरण के समय भी यह प्रवृत्ति लोक की बहुप्रचलित परम्परा रही है।

भारत में भी प्राचीनकाल से ही इस लोकरीति के अनेकों दृष्टान्त प्राप्त होते हैं यथा कपिलवस्तु के शाक्य स्वयं को बुद्ध के वंश से सम्बन्धित होने की गर्वोक्ति कई प्रसंगों में करते हैं अनेक राजवंशो में भी यह प्रवृत्ति मिलती है कि यदि एक राजा उस वंश का बहु ख्यातिलब्ध है तो उस वंश के या उसे आदर्श मानने वाले अन्य जन उसी नाम को गर्व से धारण करते थे, गुणाढ्य की रचना कथासरित्सागर से विक्रमादित्य नामक उज्जयिनी के शक विजेता, महापराक्रमी बुद्धिमान एवं नीतिनिपुण नरेश का उल्लेख मिलता है। बृहत्संहिता का रचनाकार शासन करने वाले दो पृथक–पृथक विक्रमादित्य नामक राजाओं से भिज्ञ है। उज्जयिनी नरेश विक्रमादित्य ने शक विजय के पश्चात सामान्य संवत् से 57 वर्ष पूर्व में विक्रम संवत् का प्रचलन किया। जिसका प्रयोग निरन्तर दो हजार वर्षों से न केवल भारत वरन् विदेशों में भी कई व्यवसायिक–व्यापारिक हिसाब किताब में किया जा रहा है। इसी परम्परा के कारण आज भी व्यावसायिक अपने वर्ष का हिसाब–किताब फाल्गुन मास की प्रतिपदा से आरम्भ कर रहे हैं।[1]

विक्रमादित्य मालवगण के नेता थे। 326 सामान्य संवत् पूर्व में जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया था, उस समय मालव झेलम के तट पर रहते थे। झेलम तथा चिनाब के संगम से ऊपर क्षुद्रक और नीचे झेलम के बहाव के किनारे मालवों का निवास स्थल था। सिकन्दर ने जब मालवों पर आक्रमण किया था, तब प्रतिरोधक कार्यवाही में मालवों के किसी वीर के बाण से सिकन्दर घायल हो गया था। यूनानी इतिहासकारों ने बताया कि उस काल में भी मल्लोई युद्धप्रिय एवं वीर के रूप में प्रसिद्ध थे। यूनानियों ने मालवों को 'मल्लोई' कहा है।[2]

कर्टियस का कहना है कि जब ग्रीक सैनिकों ने जाना कि उन्हें भारतीयों में सबसे युद्धप्रिय गणतंत्र मालवों से लडना है तो वे सहसा त्रास से भर गये थे। सिकन्दर से पराजित होने के बाद मालवों ने इस निवास–स्थान को निरापद न समझ कर पंजाब छोड दिया और पूर्वी राजपूताना और उसके आस–पास के क्षेत्रों में बस गये थे। पतंजलि मालवों से परिचित थे।[3]

करकोट नागर (जयपुर राज्य) से मालवों के सिक्के प्राप्त हुए हैं। मालव क्रमशः संभवतः पटियाला राज के भटिण्डा से होकर अवन्ति की ओर बढ़ गये थे। यहां इन्होंने एक विदेशी शक्ति से संघर्ष किया। सामान्य संवत् पूर्व की प्रथम

सदी के लगभग पह्लव नरेश द्वितीय मिथ्रदात ने शकों को बुरी तरह पराजित कर दिया था। स्वतंत्रता प्रिय मालवों ने अवन्ति से शकों को परास्त करके खदेड़ दिया। लड़ाई भीषण हुई थी क्योंकि पह्लव नरेश के कारण भारत के बाहर वापस जाकर मूल क्षेत्रों में पुनः निवास करना अब शकों के लिए संभव नही था। भीषण संघर्ष करने पर भी मालव विजयी हुए उन्होंने शकों को अवन्ति से निकाल दिया और उस क्षेत्र का नाम अपने नाम के अनुरूप मालवा रखा। इसी विजय तिथि के स्मारक के स्वरूप विक्रम संवत का प्रचलन हुआ।[4]

जनश्रुति के साथ ऐतिहासिक अनुश्रुति भी प्रथम शती सामान्य संवत् पूर्व में विक्रमादित्य के होने के पक्ष में है। स्टेनकोंनो को उद्धृत करते हुए डॉक्टर काशी प्रसाद जायसवाल ने भी इस काल में एक विक्रमादित्य नामक राजा की उपस्थिति स्वीकार की है।[5] साहित्यिक अनुश्रुति तो स्पष्ट रूप से इस विक्रमादित्य विषयक तथ्य के अनुकूल है। जैन–साहित्य पट्टावलि, जिनसेन गाथा आदि के अतिरिक्त संस्कृत तथा प्राकृत साहित्य से भी प्रथम शती सामान्य संवत् पूर्व में विक्रमादित्य के होने का प्रमाण उपलब्ध है। सातवाहन (शालिवाहन) राजा हाल के प्राकृत ग्रन्थ गाथा सप्तशती में राजा विक्रमादित्य का उल्लेख है।[6]

योरप के इतिहास में चार विशाल साम्राज्यों का वर्णन पाया जाता है– 1. रोमन साम्राज्य 2. आस्ट्रो हंगोरियन साम्राज्य 3. रूसी साम्राज्य 4. जर्मन साम्राज्य।

योरप के इतिहास में चारों विशाल साम्राज्यों के सम्राटों की उपाधि सीजर अथवा सीजर से उद्गमित परिवर्तित रूप थी। यह सीजर (Caesar) एक व्यक्ति था। इसका पूरा नाम जूलियस सीजर (Julius Caesar) था। इसने ऐसे अदभुत और अलौकिक कार्य किये कि सीजर नाम में एक विशेष महत्व और आकर्षण हो गया था। इसलिये रोमन साम्राज्य के प्रत्येक सम्राट ने इस नाम के महत्व आकर्षण तथा तेज से लाभ उठाने के लिये इस नाम को उपाधि के तौर पर अपने साथ जोड़ लिया और स्वयं सीजर बन बैठा।[7]

उन्नीसवीं शताब्दी के योरप के इतिहास में इसी मनोवृत्ति का एक अन्य उदाहरण नेपोलियन है। नेपोलियन (Nepoleon) के अमानुषिक साहस और पराक्रम के कारण नेपोलियन शब्द मात्र में एक चमत्कार, एक मन को मोहने वाला आकर्षण पैदा हो गया था। जब 1848 में फिलिप ने फ्रांस की क्रांति द्वारा शक्ति प्राप्त की तो अपना नाम नेपोलियन रख लिया और इतिहास में वह नेपोलियन तृतीय के नाम से जाना गया।

धार्मिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में भी इसी मनोवृत्ति का प्रदर्शन मिलता है। आदि शंकराचार्य के अलौकिक बुद्धि चमत्कार के पश्चात उनके द्वारा स्थापित मठों के अध्यक्ष अपने आपको अभी तक शंकराचार्य कहते हैं। सिक्ख पंथ के संस्थापक गुरू नानक थे। उनके पीछे आने वाले सारे गुरू अपने आपको नानक कहते थे। दूसरे गुरू से लेकर दसवें गुरू ने जो कविताएं रचीं वे सभी अब गुरू ग्रन्थ साहिब में सुरक्षित हैं और वे सब नानक के नाम से रची गई हैं।

आधुनिक काल में भी जनसामान्य इसी मनोवृत्ति का अनुसरण करते हुए मुहम्मद, अली एवं राम नाम एवं उपनाम का प्रयोग करने की प्रवृत्ति आम है। एक ऐसा ही महातेजस्वी राजा विक्रमादित्य सामान्य संवत् पूर्व की पहली शताब्दी में मिलता है।

16वीं शती के हेमू नाम से विख्यात ब्राह्मण राजा हेमचंद भी उल्लेखनीय है, जिसने 7 अक्टूबर 1556 को मुगलों को हराकर दिल्ली की गद्दी पर अधिकार किया। उसने भी विक्रमादित्य की उपाधि धारण की थी।

महाराजा विक्रमादित्य भारतीय संस्कृति के ऐसे प्रतिनिधि राजा हुए जिन्होंने अपने कृतित्व से समाज में चेतना जागृत की। कश्मीर के नरेश अनन्त (1029–1064ई0) की सभा के सभासद क्षेमेन्द्र ने बृहत्कथामंजरी में इस राजा का वर्णन किया है। महाकवि सोमदेव की रचना कथासरित्सागर में कहानियों का एक समूह है जिसे वेतालपंचविशंती नामक ग्रन्थ के रूप में भी जाना जाता है। कथासरित्सागर से स्पष्ट होता है कि यह विक्रमादित्य उज्जैन से शासन करता था और पाटलिपुत्र नरेश विक्रमादित्य से विभिन्न था।

प्राचीन इतिहास में राजा– महाराजा साम्राज्य विस्तार हेतु प्रायः परस्पर युद्ध करते थे, किन्तु वे युद्ध के नियमों का पालन करते थे। वे उसी प्रकार युद्ध करते थे, जैसे आधुनिक काल में दंगल, कबड्डी एवं कुश्ती आदि खेल कुछ नियमों के अधीन ही खेले जाते है। प्रतिद्वन्दी की संस्कृति, शील तथा सम्पत्ति का क्षरण/विध्वंस उनकी नीतियों में कभी शामिल नहीं रहा। 150 ई0 में शासन करने वाला विदेशी राजा कार्दमक शक नरेश रूद्रदामन भी भारतीय नरेशों की इस नीति से परिचित एवं प्रभावित था। इसीलिये उसने यह घोषणा की थी कि ''मैंने युद्ध क्षेत्र के अतिरिक्त मानव वध न करने की प्रतिज्ञा ली है।'' अपनी इसी नीतिगत परिष्करण के कारण वह भारत में कुछ अवधि तक शासन कर पाया था।[8]

ऐसे में जीत के लिये निकृष्टतम पद्धति अपनाने को प्रवृत्त बर्बर आक्रान्ता शकों से भारत की रक्षा करना विक्रमादित्य की एक महान उपलब्धि थी। उसके उदात्त गुणों के कारण लोक ने उसे सराहा और उसके आदर्श, बुद्धि–चातुर्य अनुकरण, न्यायप्रियता तथा पराक्रम को अपना आदर्श माना।

विदेशी आक्रमणकारियों पर विजय प्राप्त करने वाले प्राचीन भारत के अनेक राजाओं में से कई ने विक्रमादित्य नाम धारण किया और कई राजाओं ने उपाधि रूप में भी इसे धारण किया। ऐसे राजाओं की लम्बी श्रृंखला से विक्रमादित्य की लोकप्रियता एवं ऐतिहासिकता दोनों सिद्ध होते हैं। सामान्य संवत् पूर्व के भारतीय राजा विक्रमादित्य विरुद को धारण नहीं करते थे, जैसे अजातशत्रु, प्रद्योत, चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक, पुष्यमित्र आदि। सामान्य संवत् प्रथम शती के पश्चात भारत के महाराज और महाराजाधिराज आदि में से कई ने विक्रमादित्य उपाधि धारण की है जैसे चंद्रगुप्त द्वितीय, स्कन्द गुप्त, शीलाद्वितीय, यशोधर्मन तथा हर्षवर्धन आदि। इन सभी ने शक अथवा विदेशियों पर विजय भी की थी।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि विक्रमादित्य एक ऐतिहासिक राजा था। जिसने 57 सामान्य संवत् पूर्व में विक्रम–संवत की स्थापना की। यह विक्रम संवत् संसार के सभी प्रचलित ऐतिहासिक संवतों से सर्वाधिक दीर्घ जीवनी शक्ति वाला सिद्ध हुआ है। अपनी प्रामाणिकता के कारण हिन्दुओं के धार्मिक कृत्यों, गणित ज्योतिष एवं फलित ज्योतिष में विक्रम संवत् का प्रयोग जारी रहा। हिन्दुओं की कुण्डलियों और पंचांग का संवत् विक्रमादित्य से सम्बन्धित रहता है। आज महाराष्ट्र, गुजरात एवं उत्तर भारत सहित समस्त भारत विक्रमादित्य की लोककथाओं से पूरित है। उसका परदुखभंजन रूप, न्यायपरायणता, उदारता और शौर्य प्रत्येक भारतीय का हृदय हार बना हुआ है। इतिहास में अनेक राजाओं ने इस राजा के नाम विक्रमादित्य को उपाधि रूप में धारण करने में गर्व का अनुभव किया। इस उपाधि के धारक राजाओं ने विदेशियों पर विजय प्राप्त की और अपने नायक के गुणों के अनुरूप साहित्य–कला को आश्रय दिया, अपार दान दिया और राजसभा के वैभव को बढ़ाया। उसके नाम की उपाधि ग्रहण करने में गौरवान्वित महसूस करना इस बात का सूचक है कि भारतीय सदा से ही विक्रमादित्य के नाम को अत्यन्त मान और आदर की दृष्टि से देखते थे। अतः इतिहास की पुस्तकों में उसका उल्लेख किया जाना आवश्यक है क्योंकि विक्रमादित्य का चलाया हुआ यह

विक्रम–संवत् हमारी अमूल्यतम एवं महानतम थाती है। यह हमारे विक्रम की स्मृति है। इसी से हम भावी विक्रम की शक्ति संचित करेंगे।

संदर्भ ग्रंथ

1. द्विवेदी, महेशचन्द्र, विक्रमादित्य और उनके नवरत्न, सम्पादक डॉ. निवेदिता रस्तोगी, गुंजन अग्रवाल, भारतीय इतिहास में सम्राट विक्रमादित्य, प्रथम संस्करण विक्रम संवत् 2076 (2019) लखनऊ–226024 उ0प्र0, पृ0 147–156
2. पाण्डेय, डॉ0आर0एन0, प्राचीन भारत का इतिहास, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ 360–61
3. वही, पेज– 360–361 ; Chakrabarti, Manika, Malwa in Post-Maurya Period, Sankar Bhattacharyya Punthi Pustak, Culcutta, First Edition 1981
4. Chakrabarti, M, Op.cit ; Cunnigham , A, Archaeological Survey Report Vol. 60, Pg. 165-174; Cunnigham , A, Archaeological Survey Report Vol. 14, Pg. 150
5. Jaiswal, K.P., Hindu Polity, 1924, Pg. 169-186 ; Jaiswal, K.P, Problems of Saka and Satavahan History, Journal of Bihar and Orissa Research Society, 1930
6. संवाहण सुहरसतोसिएण देन्तेण तुह करे लक्खं। चलणेण विक्रमाइच्च चरिअमणुसिक्खिअं तिस्सा।–गाथा 464, वेबर का संस्करण।
7. Langer, William L., An Encyclopedia of World History, George G. Harrap & Co. Ltd. London, Printed in the USA, Pg. 85-124 , 461-469
8. गोयल श्रीराम, प्राचीन भारतीय अभिलेख संग्रह, खण्ड–1, राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1982, 321–345 ; Sircar, D.C., Select Inscriptions, Calcutta ; Sircar, D.C., Studies in Indian Coins, Motilal Banarasi Das, Delhi, 1968, Pg. 204-214; Indian Museum Coins Vol-1, Pg. 162